AD EDUXIAN JOURNAL
A Quarterly Multidisciplinary Blind Peer Reviewed & Refereed Online International Journal
Google Scholar Indexing PIF: 1.048(I2OR) & 3.125 (IIFS)
Vol (3), Issue (1), January-March 2026 ISSN: 3048-7951

1857 के स्वतंत्रता संग्राम में महिला शासिकाओं की भूमिकाः रानी लक्ष्मीबाई और अवंतीबाई लोधी के विशेष संदर्भ में

सिंह, नीलेश[1] ; मिश्रा, डॉ मुक्ता[2]

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.19313395

Review: 04/02/2026 Acceptance: 04/02/2026 Publication:30/03/2026

शोध सारः प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से भारतीय स्वतंत्रता संग्राम (1857) में महिला शासिकाओं की भूमिका को रानी लक्ष्मीबाई और अवंतीबाई लोधी के विशेष संदर्भ में प्रस्तुत किया गया है। 1857 के प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में लक्ष्मीबाई और अवंतीबाई ने उन परंपरागत सामाजिक रूढ़ियों को खंडित किया है जिनमें भारतीय नारी को चार दिवारी के भीतर की वस्तु समझा जाता था। इन वीरांगनाओं ने न केवल अपने भारतीय सुसंस्कारों का अनुसरण कर अपने पारिवारिक दायित्वों को निभाया अपितु आवश्यकता पड़ने पर अपनी धरती मां भारती के लिए फिरंगियों के सामने समर्पण से बेहतर युद्ध के मैदान में अपने से कई गुना ताकतवर शत्रु से लोहा लेकर वीरों की भांति अपने प्राणों का बलिदान देकर मृत्यु का वरण करना उचित समझा। इन महिला शासिकाओं ने 1857 की क्रांति में यह प्रमाणित कर दिखाया की नारी पुरुष रूपी बैसाखी पर निर्भर न रहकर वह उसकी अनुपूरक है, वह भी युद्ध में कंधे से कंधा मिलाकर चलने वाली वीरांगना है। वास्तव में 1857 के प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में केवल पुरुषों ने ही बढ़–चढ़कर भाग नहीं लिया महिलाओं ने भी उसमें प्रचंड दुर्गा समान शत्रु का नरसंहार किया है। इन वीरांगनाओं ने आने वाले विभिन्न स्वतंत्रता आंदोलनों में नारी शक्ति के लिए प्रवेश मार्ग खोलने के साथ–साथ उनके लिए प्रेरणा स्रोत के रूप में कार्य भी किया है। अतः इस शोध के माध्यम से रानी लक्ष्मीबाई और अवंती बाई के 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में अदम्य साहस और शौर्य को रेखांकित कर उनको प्रेरणा स्रोत के रूप में स्थापित कर महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा दिया जा सकता है।

कुंजी शब्दः महिला शासिका, वीरांगना, लक्ष्मीबाई, अवंतीबाई, बलिदान, आत्म–सम्मान, झांसी, रामगढ़, अंग्रेज, आत्मोत्सर्ग, स्वतंत्रता संग्राम, रियासत आदि।

शोध विधिः प्रस्तुत शोध विषय मुख्यतः द्वितीय सूचना स्रोत पर आधारित है। इसमें 1857 के भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में रानी लक्ष्मीबाई और अवंतीबाई लोधी के योगदान से संबंधित तथ्यों का ऐतिहासिक विधि से अवलोकन किया गया है एवं उनका मूल्यांकन कर उपयुक्त निष्कर्षों को प्राप्त है किया गया है। उक्त विषय से संबंधित संदर्भ पुस्तकों, ऐतिहासिक उपन्यास, शोध प्रबंध, जिला गजेटियर तथा पत्र–पत्रिकाओं आदि का अध्ययन किया गया है।

उद्देश्यः प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से 1857 के प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में वीरांगना रानी लक्ष्मीबाई और रानी अवंतीबाई लोधी जैसी महिला शासिकाओं की भूमिका को रेखांकित करना है। इसके माध्यम से कालांतर में होने वाले विभिन्न आंदोलनों में महिलाओं की भूमिका और इनके प्रेरणात्मक तत्वों को उजागर करना है। रानी लक्ष्मीबाई और अवंती बाई के जीवन चरित्र और साहसिक कार्यों को समझने हेतु एक मंच प्रदान करना है। अतः इन वीरांगनाओं की विस्मृत होती स्मृतियों को भारतीय जनमानस के मस्तिष्क पटल पर नवीन विचारों के साथ पुनः अंकित करना है। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में रानी लक्ष्मीबाई और अवंती बाई के द्वारा सीमित संसाधनों के बाद भी अंग्रेजी हुकूमत को चुनौती देना एक मजबूत दृढ़संकल्प और संघर्ष का द्योतक है। इसके माध्यम से आने

[1]प्राध्यापक (इतिहास विभाग), शासकीय महाविद्यालय, खुरई,
[2]प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (इतिहास विभाग), महाराजा छत्रसाल बुंदेलखण्ड विश्वविद्यालय छतरपुर, मध्यप्रदेश, भारत

वाली पीढ़ियां में यह संदेश प्रसारित होगा कि यदि उच्च दृढ़संकल्प और आत्मविश्वास हो तो सीमित संसाधनों से भी बड़े–बड़े कार्यों को किया जा सकता है।

पृष्ठभूमिः 1857 के स्वतंत्रता संग्राम के स्वरूप को अनेक इतिहासकारों ने अपने–अपने दृष्टिकोण से परिभाषित किया है। कुछ इतिहासकारों ने इसे एक असंगठित सिपाही विद्रोह और नेतृत्व विहीन भारतीय विद्रोह कहा है किंतु वी.डी. सावरकर ने अपनी पुस्तक 'द इंडियन वॉर ऑफ इंडिपेंडेंस– 1857' में इसे एक नियोजित और भारत का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम कहा है। इसी प्रकार डॉ सेन के अनुसार ''एक विद्रोह जिसमें बहुत से लोग सम्मिलित हो जाए तो उसका स्वरूप राष्ट्रीय हो जाता है।'' अर्थात डॉ सेन के अनुसार 1857 की क्रांति स्वतंत्रता संग्राम ही था। अतः उपरोक्त मत उन पश्चिमी विद्वानों और कुछ भारतीय विद्वानों के विचारों का खंडन करते हैं जिन्होंने इसे भारतीय स्वतंत्रता संग्राम मानने से इनकार किया है।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में यदि महिला शासिकाओं और वीरांगनाओं का जहां भी उल्लेख होगा उसमें झांसी की रानी लक्ष्मीबाई और रामगढ़ की रानी अवंतीबाई लोधी का नाम सर्वोपरि होगा। जिस प्रकार झांसी को राजा गंगाधर राव की मृत्यु के पश्चात अंग्रेजों ने उसे राज्य से विहीन कर दिया उसी प्रकार रामगढ़ रियासत के राजा विक्रमजीत को अंग्रेजों ने पागल घोषित कर 'कोर्ट ऑफ वार्डन' के अधीन कर अंग्रेजों ने अपना नियंत्रण स्थापित कर लिया। इस प्रकार अंग्रेजों की हड़प नीति और हस्तक्षेपी नीति के फलस्वरुप इन वीरांगनाओं ने 1857 के प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में प्रत्यक्ष रूप से भाग लेकर अपने प्राणों के बलिदान तक अपनी प्रजा, राज्य और अपने देश की रक्षा की।

भारतवर्ष क्या इस धरती पर जब–जब इतिहास में वीरांगनाओं का आदर्श उदाहरण प्रस्तुत होगा तब तक झांसी की रानी लक्ष्मीबाई का नाम प्रखर होगा। भले ही लक्ष्मीबाई का प्रसंग 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में आता हो किंतु वर्तमान समाज में आज भी नारी के स्वाभिमान और आत्मरक्षा की प्रेरणा स्रोत के रूप में लक्ष्मीबाई प्रासंगिक हैं। अंग्रेजों के दांत खट्टे करने वाली लक्ष्मीबाई का जन्म कार्तिक सदी 14 संवत 1891(तारीख 16 नवंबर 1835) को मोरोपंत के घर हुआ था। बचपन में उनका नाम मणिकर्णिका रखा गया। 1842 को मनु का विवाह झांसी नरेश गंगाधर राव नेवालकर से हो गया और वे झांसी की रानी लक्ष्मीबाई बन गईं। दीर्घकालीन अस्वस्थता के कारण 21 नवंबर 1853 को गंगाधर राव की मृत्यु हो जाती है और इसके पश्चात बाईसाहब का संघर्ष भी यहीं से प्रारंभ हो जाता है। अंग्रेजों ने अपनी हड़प नीति के तहत रानी के दत्तक पुत्र दामोदर राव (पूर्व आनंदराव) को उत्तराधिकारी मानने से इनकार कर दिया और झांसी रियासत को अंग्रेजी राज्य में विलय की प्रक्रिया प्रारंभ कर दी। इस पर लक्ष्मीबाई ने कहा 'मैं अपनी झांसी नहीं दूंगी'। अतः जब 1857 का प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम प्रारंभ हुआ तो लक्ष्मीबाई ने झांसी का नेतृत्व कर स्वतंत्रता सेनानियों का साथ दिया। उन्होंने सर ह्यूरोज के नेतृत्व वाली अंग्रेजी सेना का वीरता पूर्वक मुकाबला किया। लेखक पारसनीय बलवंत ने सन 1857 के युद्ध के बारे में लिखा है कि ''जगह–जगह 51 बड़ी तोपें रखी गई थी।'' जब अंग्रेजी सेना झांसी के किले में प्रवेश कर गई तब बाईसाब अपने सलाहकारों के कहने पर झांसी के किले को छोड़कर कालपी पहुंचीं। फिर वहां से रानी बांदा के नवाब, तात्या टोपे और राव साहब से मिलकर सहायता हेतु ग्वालियर पहुंचीं लेकिन उन्हें सहायता के स्थान पर जयाजी राव का विरोध सहना पड़ा किंतु तात्या टोपे ने बड़ी कुशलता से जयाजी की अधिकांश सेना को अपने पक्ष में मिल लिया। इसी बीच 16 जून 1857 को ह्यूरोज ग्वालियर के मुरार में आ धमका। छुट–पुट लड़ाइयां के पश्चात 17 जून को रानी ग्वालियर के निकट 'कोटा सराय' नामक स्थान पर स्वयं युद्ध क्षेत्र में कूद पढ़ीं। इस भीषण संग्राम में रानी ने अनेक फिरंगियों को मौत की नींद सुला दिया किंतु अंततः 18 जून 1858 को अंग्रेजों से लड़ते–लड़ते रानी लक्ष्मीबाई अपनी हार सुनिश्चित जान स्वंय को कटार मारकर सदा के लिए अमर हो जातीं हैं। रानी का इतना प्रभाव था कि उनके अदम्य साहस, शौर्य और वीरता का शत्रु भी प्रशंसा करते नहीं

थकते। सर ह्यूरोज ने रानी की प्रशंसा में अपनी डायरी में लिखा है ''महारानी का उच्चकुल आश्रितों और सिपाहियों के प्रति उनकी असीम उदारता और कठिन समय में भी अडिग, धीरज उनके इन गुणों ने रानी को हमारा एक अजय प्रतिद्वंदी बना दिया था। वह शत्रुदल की सबसे बहादुर और सर्वश्रेष्ठ सेनानेत्री थी।'' इस प्रकार लक्ष्मीबाई ने अपनी प्रजा, राज्य और राष्ट्र के लिए ना जौहर किया ना समझौता किया अपितु अंतिम सांस तक लड़कर इतिहास में अपना नाम अमर किया।

1857 के प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में सागर–नर्मदा क्षेत्र के अंतर्गत मंडला में 'रामगढ़ की रानी' अवंतीबाई लोधी ने भी अपने बहुत सीमित संसाधनों के रहते हुए तात्कालिक समय की अजय अंग्रेजी सेना का वीरतापूर्वक मुकाबला कर मातृभूमि के प्रति अपना दायित्व निभाया। 13 दिसंबर 1853 को राजा विक्रमाजीत की अस्वस्थता और पुत्रों के नाबालिक होने कारण अंग्रेजों ने रामगढ़ राज्य को 'कोर्ट ऑफ वार्डन' के हाथों सौंप दिया। अंग्रेजों की हस्तक्षेपकारी नीतियों और मंडला के गौंड राजा शंकरशाह और उनके पुत्र रघुनाथशाह को 18 दिसंबर 1857 को जबलपुर में तोप के मुंह से बांधकर उड़ा देने की घटना ने रानी के क्रोध को और बढ़ा दिया। इसी क्रम में रानी ने अपने सेनापति उमराव सिंह लोधी की सहायता से 300 सिपाहियों के साथ घुघरी पर आक्रमण कर दिया। 1857 में मंडला का डिप्टी कमिश्नर कैप्टन वार्डिंग्टन था। रानी अवंतीबाई 24 नवंबर 1857 को खैरी के युद्ध में वर्डिंगटन के नेतृत्व वाली सेना को पराजित कर देती हैं। कहा जाता है कि अवंतीबाई से युद्ध के दौरान वार्डिंगटन अपने 8 वर्षीय पुत्र रोमियो को छोड़कर जबलपुर भाग जाता है, किंतु रानी ने भारतीय संस्कृति का परिचय देते हुए उसके बेटे को वार्डिंग्टन के पास सकुशल पहुंचा दिया। भारतीय इतिहास की एक और काले धब्बेदार परंपरा रही है 'गद्दारों की परंपरा'। इसमें एक गद्दार रीवा नरेश की सहायता से अंग्रेजों ने रानी अवंतीबाई लोधी को 9 अप्रैल 1858 को देवहारगढ़ के युद्ध में पराजित किया। रानी अवंतीबाई ने अपने पूर्वोक्त वीरांगनाओं भोपाल की रानी कमलापति, गोंडवाना की रानी दुर्गावती और अपने समकालीन झांसी की रानी की नाई अपनी अस्मिता की रक्षा हेतु स्वयं को सेनापति ठाकुर उमराव सिंह से तलवार लेकर अपने पेट में घोंप लेती है। इस प्रकार रानी अवंतीबाई लोधी हमेशा के लिए इतिहास में स्वर्ण अक्षरों से अपना नाम दर्ज करा लेतीं है। युद्ध के बारे में कहा जाता है कि देवहारगढ़ में रामगढ़ की ओर से 25 जबकि अंग्रेजों की ओर से 1 सैनिक मर जाता है। अब विद्रोहियों का मनोबल पूर्णतः समाप्त हो जाता है और इस प्रकार एक और वीरांगना महिला शासिका ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के महायज्ञ में अपने प्राणों की आहुति दे दी। वीरांगना अवंतीबाई का शौर्य और बलिदान भले ही साहित्य के पन्नों और मनःस्मृति के पटल पर रानी झांसी के समान स्थान प्राप्त ना कर पाया हो, किंतु उन्होंने 1857 की क्रांति में इतनी द्रुतगति से रामगढ़ में क्रांति का संचालन किया कि उन्होंने रानी लक्ष्मीबाई के पश्चात विद्रोह किया और उनसे पहले शहीद हुईं। इस प्रकार रानी अवंतीबाई को इतिहास में समुचित स्थान सुनिश्चित कर उनको सम्मान जनक न्याय दिलाना की आवश्यक है। इतिहासकार श्री सुंदरलालजी ने अपने प्रसिद्ध ऐतिहासिक उपन्यास 'भारत में अंग्रेजी राज्य' में लिखा है कि ''निसंदेह रानी अवंतीबाई का व्यक्तिगत जीवन जितना पवित्र एवं निष्कलंक था, उनकी मृत्यु भी उतनी ही विरोचित थी। मुट्ठी भर देशभक्त सैनिकों के साथ जिस अलौकिक वीरता और असाधारण युद्ध कौशल के साथ उन्होंने मृत्यु का वरण किया वह इतिहास में बिरले उदाहरण में एक है''।

निष्कर्ष: उपरोक्त प्रस्तुत शोध के माध्यम से 1857 के भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में रानी लक्ष्मीबाई और अवंतीबाई लोधी जैसी महिला शासकीयों की भूमिका का अवलोकन कर निष्कर्षों को प्राप्त किया गया है। इन वीरांगनाओं ने तात्कालिक पुरुष प्रधान समाज, अकुशल सैनिक और सीमित संसाधनों जैसी समस्याओं के होते हुए विश्व की सर्वोच्च शक्ति को जिस साहस और संकल्प के साथ चुनौती दी वह अविस्मरणीय है। यदि वास्तव में उस समय के राजे राजवाड़े इन वीरांगनाओं का पूरे सामर्थ्य के साथ सहयोग करते तो आने वाले समय में जो 1947 में

भारत को आजादी मिली उसमें और 90 साल का इंतजार नहीं करना पड़ता। साथ ही साथ भारतीय इतिहास की दशा और दिशा आज कुछ और होती। इन वीरांगनाओं ने जिस प्रकार शासन का संचालन किया, अपनी प्रजा के हितों का ध्यान रखा, किसानों और व्यापारियों की सहायता की, अपने पारिवारिक जीवन में पवित्रता और धर्म का पालन किया और इन सबसे बढ़कर अपनी मातृभूमि की रक्षा हेतु अपने प्राणों का बलिदान दिया इससे सिद्ध होता है कि इन वीरांगनाओं ने न केवल अपनी संस्कृति की रक्षा की बल्कि अपनी सूझबूझ से राजनीतिक जीवन में उच्च आदर्शों को स्थापित कर अपने से कई गुना शक्तिशाली अंग्रेजों को चुनौती दी। चूंकि 1857 का प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम किसी एक आकस्मिक घटना का परिणाम नहीं था बल्कि यह तो अंग्रेजों की उन अनेक शोषणकारी नीतियों का समुच्चय था जिनका निर्माण और क्रियान्वयन 1757 के प्लासी के युद्ध से हो रहा था अर्थात क्रांति रूपी ज्वाला अन्दर ही अन्दर पिछले 100 वर्षों से धधक रही थी जो 1857 में विस्फोट के रूप मैं परिलक्षित होती हैं। इसी क्रम में लॉर्ड डलहौजी के 'व्यपगत के सिद्धांत' या हड़प नीति ने झांसी रियासत और रामगढ़ रियासत में हस्तक्षेप किया जिसके परिणामस्वरूप इन वीरांगनाओं ने 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय रूप से भाग लिया।

झांसी रियासत में क्रांति का नेतृत्व जिस प्रकार भाईसाहब ने शौर्य और वीरता के साथ किया उसका वर्णन इतिहास के किसी भी पन्ने में सुभद्राकुमारी चौहान की निम्नलिखित कविता के बिना अधूरा है–

''सिंहासन हिल उठे राजवंशों ने भृकुटी तानी थी,
बूढ़े भारत में भी आई फिर से नई जवानी थी ।
गुमी हुई आजादी की कीमत सब ने पहचानी थी,
दूर फिरंगी को करने की सबने मन में ठानी थी,
चमक उठी सन् सत्तावन में वह तलवार पुरानी थी।
बुंदेले हरबलों के मुंह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी।''

इसी प्रकार डॉक्टर दुर्गेश ने अपने प्रसिद्ध खंडकाव्य 'बलिदान' के छंद में रामगढ़ की रानी अहिल्याबाई का वर्णन कुछ इस प्रकार किया है–

तेईस नवंबर सन् सत्तावन पावन पर्व हमारा है।
बलिदानी वीरों की बहती शिर शोणित की धारा है।
रानी बढ़ी रामगढ़ पहुंची अपना झंडा फहराया।
मार भगाया दुश्मन दल को उन आरियों को थर्राया। (114)

(इसके आधार पर रानी अवंतीबाई ने 23 नवंबर 1857 को अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह का शंखनाद किया। अतः यह तारीख 23– 24 नवंबर 1857 को अवंतीबाई लोधी की वार्डिंगटन के विरुद्ध खैरी के युद्ध की घटना हो सकती है।)

संदर्भ–ग्रंथ सूची

1. सावरकर, विनायक दामोदर, द इंडियन वॉर ऑफ इंडिपेंडेंस–1857, प्रकाशन 1909
2. ग्रोवर, बी.एल. एवं यशपाल, अलका मेहता, आधुनिक भारत का इतिहास, नई दिल्ली, 2018, पृष्ठ–186
3. पारसनीय, श्रीयुत दत्तात्रेय बलवंत की मराठी पुस्तक, 'झांसी की रानी लक्ष्मीबाई का हिंदी अनुवाद, प्रयाग, 1962, पृष्ठ–2

4. तिवारी, गोरेलाल, बुंदेलखंड का संक्षिप्त इतिहास, इलाहाबाद प्रथम संस्करण, पृष्ठ–346
5. भारत के नारी रत्न, प्रशासन– सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली 2021, पृष्ठ–59.
6. वर्मा, वृंदावनलाल उपन्यास रामगढ़ की रानी अवंतीबाई, पृष्ठ–93
7. भूषण, सारंग, रामगढ़ के राजा तब और अब, पृष्ठ–16
8. महदेले, संत कवि केशवदास लोधी, लोधी क्षत्रिय पुराण, पृष्ठ–58,59
9. इरस्किन, मेजर डब्लू.सी., नरेटिव्स ऑफ इवेंट्स 1857–58, पृष्ठ –415
10. त्रिपाठी, डॉ के.पी., रानी झांसी– लक्ष्मीबाई का शहीद/बलिदान दिवस, बुंदेलखंड का वृहद इतिहास, पृष्ठ–372,73
11. ठाकुर, श्री हीरासिंह, रामगढ़ की रानी वीरांगना अवंतीबाई (आलेख), बुंदेली दस्तक भोपाल, पृष्ठ–44
12. भारत के नारी रत्न, प्रशासन– सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 2021, पृष्ठ–59
13. खरे, डॉ डी.पी.'प्रसाद', वीरांगना अवंतीबाई : साहित्य के झरोखे में (लेख), बुंदेली बसंत, 2007, पृष्ठ–49, 50